न्यायालय अपर सेशन न्यायाधीश क्रम–11, जयपुर महानगर–प्रथम, मुख्यालय सांगानेर

पीठासीन अधिकारी : पुरवा चतुर्वेदी, आर0जे0एस0
(जिला न्यायाधीश संवर्ग)

फौज0 अपील संख्या : 36/2024

सीआईएस नम्बर : 81/2024

कृपाल सिंह शेखावत पुत्र श्री जयसिंह राजपूत, निवासी 44, जयनिवास इन्द्रा कॉलोनी पानीपेच बनीपार्क, जयपुर।

........अपीलार्थी/अभियुक्त

बनाम

राजस्थान सरकार जरिये लोक अभियोजक।

........प्रत्यर्थी

फौजदारी अपील विरूद्व निर्णय एवं दण्डादेश दिनांक 05.07.2024 न्यायालय न्यायिक मजिस्ट्रेट, क्रम–17, जयपुर महानगर प्रथम, मुख्यालय सांगानेर, फौजदारी नियमित प्रकरण संख्या 38/2016, उनवानी सरकार बनाम कृपाल सिंह शेखावत, अंतर्गत धारा 420, 406 भा0दं0सं0
पीठासीन अधिकारी श्रीमती कामाक्षी मीना, आर0जे0एस0

उपस्थितिः–

1. श्री अखलेश कुमार शर्मा, हेमा कश्यप अधिवक्तागण वास्ते अपीलार्थी/अभियुक्त।
2. श्री संजय शर्मा अपर लोक अभियोजक वास्ते राज्य पक्ष/अप्रार्थी।
3. श्री महावीर सुरेन्द्र जैन अधिवक्ता वास्ते परिवादी पक्ष।

:: निर्णय :: **दिनांक : 29.06.2026**

1. प्रकरण के अपीलार्थी/अभियुक्त की ओर से यह अपील विद्वान अधीनस्थ न्यायालय न्यायिक मजिस्ट्रेट, क्रम–17, जयपुर महानगर प्रथम, मुख्यालय सांगानेर के निर्णय व दण्डादेश दिनांक 05.07.2024 के विरूद्व इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किये जाने पर दर्ज रजिस्टर की गई।

2. अपील के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार है कि अपीलार्थी कृपाल सिंह ने प्रस्तुत अपील दोषसिद्धि के विरुद्ध प्रस्तुत की है। जहां विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को अपराध अंतर्गत धारा 420 भारतीय दंड संहिता में दोषसिद्ध किया है। विचारण न्यायालय का निर्णय स्वेच्छाचारी विधि विरुद्ध एवं उपलब्ध साक्ष्य के विपरीत है जो की अपास्त किये जाने योग्य है। विचारण न्यायालय ने पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य

का भलीभांति विवेचन ना करते हुए अनुचित आदेश पारित किया है। प्रकरण में विचारण के दौरान परीक्षित सभी साक्षी परिवादी के हितबद्ध साक्षी है और अभियुक्त के विरुद्ध आरोपित अपराध को प्रमाणित करने के लिए दस्तावेजों का समग्र अवलोकन नहीं किया गया है। एफआईआर और प्रदर्श पी0 4 अनुबंध के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रकरण में एक सिविल विवाद को आपराधिक रूप देते हुए जबरन एफआईआर दर्ज करवाकर प्रकरण का विचारण करते हुए अभियुक्त को दोषसिद्ध किया गया है। लिखित में निष्पादित दस्तावेज के अस्तित्व में रहते हुए परिवादी अनुबंध की शर्तों की पालना के लिए सिविल न्यायालय के समक्ष उपचार प्राप्त कर सकता था परन्तु अपीलार्थी का कोई आपराधिक आशय छल कारित करने का नहीं होने के कारण आलोच्य आदेश अपास्त किये जाने योग्य है। विचारण न्यायालय ने निर्णय पारित करते समय अपीलार्थी की आपराधिक मानसिकता पर विचार नहीं किया और बिना आशय के किसी भी अपराध का गठन नहीं होने के कारण दोषसिद्धि अपास्त किये जाने योग्य है। आपराधिक प्रकरणों के विचारण के दौरान सिविल अधिकारों के संबंध में निष्कर्ष दिया जाना एक न्यायालय के क्षेत्राधिकार से बाहर है और विचारण न्यायालय ने पुलिस की कहानी को ही सत्य मानते हुए दोषसिद्धि का त्रुटिपूर्ण निर्णय पारित किया है। प्रकरण में परिवादी को इकरारनामे से संबंधित सभी तथ्यों की पूर्ण जानकारी थी और इसी कारण परिवादी द्वारा वर्णित अपराध धारा 420 भारतीय दंड संहिता की परिधि में सम्मिलित नहीं है। छल का अपराध गठित करने के लिए किसी तात्विक तथ्य का छुपाव किया जाना आवश्यक होता है परन्तु अपीलार्थी ने परिवादी को सभी तथ्यों से पूर्णतया अवगत कराकर ही अनुबंध का निष्पादन किया था और इसलिए दोनों पक्षों के बीच का संव्यवहार एक सिविल विवाद है। मात्र मालिकाना हक न होने के आधार पर छल के अपराध को गठित नहीं माना जा सकता और परिवादी ने धन वसूली के स्थान पर मामले को आपराधिक रंग देते हुए कलुषित मानसिकता से यह आपराधिक प्रकरण दर्ज करवाया है जिसमें विचारण न्यायालय ने सभी तथ्यों पर गौर किये बिना अवैध आदेश पारित किया है इसलिए अपील स्वीकार कर अपीलार्थी को दोषमुक्त किये जाने का निवेदन किया।

3. प्रत्यर्थी को तलब किया गया एवं दोनों पक्षों की बहस सुनी गई।

4. बहस के दौरान अधिवक्ता अपीलार्थी ने लिखित बहस एवं अपील मीमो के तथ्यों को दोहराते हुए उसके समर्थन में तर्क दिये कि अभियुक्त एवं परिवादी के

बीच इकरारनामे के निष्पादन को लेकर एक सिविल विवाद विद्यमान था जिसमें अभियुक्त का कोई छल या अपराध कारित करने की मंशा नहीं थी। परिवादी के पास अनुबंध की विशिष्ट अनुपालना अथवा धन वसूली के संबंध में सिविल उपचार विद्यमान था और अभियुक्त का दुराशय नहीं होने के कारण सिविल विवाद को आपराधिक स्वरूप दिया गया है। किसी भी प्रकार की विधिक कार्यवाही को अंगीकृत करने से पूर्व परिवादी ने अपीलार्थी को कोई नोटिस नहीं दिया और आज भी परिवादी क्षतिपूर्ति के रूप में अभियुक्त से उपचार प्राप्त कर सकता है। धारा 420 भारतीय दंड संहिता का कोई भी तत्व समूचे प्रकरण में समाहित नहीं है और ना ही प्रारम्भ से अभियुक्त का परिवादी के साथ छल कारित करने का आशय था। यदि दो पक्षों के बीच निष्पादित किसी अनुबंध की पालना विधिक रूप से करवायी जा सकती है तो इसे छल की श्रेणी में परिगणित नहीं किया जा सकता और चूंकि अभियुक्त का आशय प्रारम्भ से छल का नहीं था इसलिए अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाना चाहिए। विचारण न्यायालय ने अपराध के तत्वों की कसौटी पर प्रकरण का मूल्यांकन किये बिना मात्र मौखिक साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को गलत रूप से दोषसिद्ध किया है इसलिए अपील स्वीकार कर अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जावे। अपने उक्त तर्को के समर्थन में निम्नलिखित सम्माननीय न्यायिक दृष्टान्त प्रस्तुत किये गये–

(1)– हृद्य रंजन प्रसाद वर्मा व अन्य बनाम स्टेट ऑफ बिहार व अन्य अपील (कि0) नं0 313–314 / 2020 निर्णय दिनांक 31.03.2020

(2)– कि0 अपील नं0 1285 / 2021 एसएलपी (कि0) नं0 9871 / 2019 मिथलेश कुमार जे साह बनाम कर्नाटक राज्य व अन्य

5. विद्वान अधिवक्ता परिवादी एवं अपर लोक अभियोजक ने अपील मीमो के तथ्यों का खंडन करते हुए तर्क दिये कि अभियुक्त ने विवादित सम्पत्ति का स्वामित्व नहीं होने के बावजूद परिवादी को उक्त सम्पत्ति विक्रय करने का प्रलोभन व उत्प्रेरण देते हुए विक्रय इकरारनामा निष्पादित किया और उससे लगभग 11 लाख रुपये की अग्रिम धन राशि भी प्राप्त की। अनुबंध की शर्तों के अधीन ऋण राशि का भुगतान कर रजिस्ट्री परिवादी के पक्ष में नहीं करवाकर और दी गई उधार राशि का पुनर्भुगतान परिवादी को ना कर अभियुक्त ने अपने छल के आशय को प्रकट किया है इसलिए विचारण न्यायालय ने सम्पूर्ण प्रकरण का उचित विवेचन करते हुए न्यायपूर्ण निर्णय पारित किया है जिसमें हस्तक्षेप की कोई संभावना नहीं है। अतः अपील सारहीन होने

के कारण सव्यय अस्वीकार की जावे और विचारण न्यायालय के निर्णय के पालन में अभियुक्त को दोषसिद्धि के अनुसरण में दण्डादेश भुगताया जावे।

6. उभय पक्ष की बहस के तर्कों पर मनन करने एवं पत्रावली का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने के पश्चात न्यायालय के समक्ष विचारणीय बिंदु यह उत्पन्न होता है कि – **क्या विचारण न्यायालय ने छल के अपराध के आवश्यक तत्वों का विवेचन अनुचित रूप से करते हुए त्रुटिपूर्ण निर्णय व दण्डादेश पारित किया है जिसे अपील में वर्णित आधारों पर अपास्त किया जाना चाहिए ?**

7. उक्त विचारणीय बिंदु के अनुसरण में पत्रावली का अवलोकन करने पर प्रकरण के तथ्य इस प्रकार प्रकट होते हैं कि परिवादी हनुमान सहाय ने एक परिवाद विचारण न्यायालय के समक्ष दिनांक 10.10.2014 को अपीलार्थी कृपाल सिंह व कुलदीप सिंह और धनपत सिंह के विरुद्ध अपराध अंतर्गत धारा 420, 406, 120बी भारतीय दंड संहिता के अधीन प्रस्तुत किया था जिसके अनुसार दिनांक 06.08.2013 को परिवादी के पड़ौस में प्रोपर्टी का काम करने वाले रामजीलाल ने परिवादी को अभियुक्त से मिलाया था। रामजीलाल के कहने पर परिवादी अभियुक्त कृपाल सिंह का बुद्धसिंहपुरा में स्थित प्लॉट खरीदने पर राजी हुए और अभियुक्तगण ने परिवादी को कागज दिखाकर प्लॉट नंबर 36 स्कीम नंबर 17 बुद्धसिंहपुरा सांगानेर विक्रय करने का प्रस्ताव किया और प्लॉट नम्बर 44 इंदिरा कॉलोनी पानी पेच, बनी पार्क को खुद का वसीयतशुदा बताते हुए सौदा करने की बात कही। दिनांक 21.08.2013 को पुनः सौदे का निवेदन करने पर परिवादी ने बजरंग लाल यादव, दिनेश मीणा, बाबूलाल यादव और छोटू यादव की उपस्थिति में प्लॉट नंबर 36 स्कीम नम्बर 17 बुद्धसिंहपुरा जगतपुरा तहसील सांगानेर का 55 लाख रुपये में सौदा तय किया और परिवादी ने उसी समय वहीं वाटिका में 22 लाख रुपये जरिये चैक प्राप्त कर लिए। इसके अतिरिक्त साढे 11 लाख रुपये भी नकद और जरिये चैक परिवादी को अदा किये गये और चार माह में रजिस्ट्री कराने व कब्जा संभालने का आश्वासन दिया गया। अभियुक्तगण ने प्लॉट नंबर 44 इंदिरा कॉलोनी पानीपेच, बनीपार्क को भी उक्त राशि में ही विक्रय करना तय किया परन्तु दोनों प्लाटों के पेटे अग्रिम राशि प्राप्त की और कागजात बाद में तैयार करवाने की बात तय की गई। दोनों पक्षों की रजामन्दी से लिखा पढ़ी का समय 5 फरवरी 2014 तक बढ़ा दिया गया और समय पूरा होने पर रजिस्ट्री करवाना तय किया गया। परिवादी रामजीलाल को रजिस्ट्री करने के लिए बार–बार कहता रहा परन्तु अभियुक्तगण कोई ना कोई बहाना बनाकर

रजिस्ट्री करवाना टालते रहे और तकाजों से परेशान होकर जब परिवादी ने दिनांक 01.10.2014 को अभियुक्तगण से बात की तो अभियुक्तगण ने रजिस्ट्री कराने से मना कर दिया और धमकी दी कि उन्होंने धोखा देकर रुपये हड़प लिए है। उक्त परिवाद को विचारण न्यायालय द्वारा अंतर्गत धारा 156 (3) दंड प्रक्रिया संहिता संबंधित पुलिस थाने में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के लिए प्रेषित किया गया और प्रकरण में एफआईआर दर्ज होने के बाद पुलिस ने अनुसंधान के पश्चात मात्र अभियुक्त कृपाल सिंह के विरुद्ध आरोपपत्र प्रस्तुत किया।

8. आरोप पत्र की विशिष्टियों पर विचार करने के उपरान्त विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध प्रसंज्ञान लेकर पृथक से आरोप विरचित कर सुनाये व समझाये गये, जिस पर अभियुक्त ने आरोप अस्वीकार कर अन्वीक्षा चाही। विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष की ओर से कुल 13 गवाह परीक्षित करवाये गये और दस्तावेजी साक्ष्य में प्रदर्श पी0 1 से प्रदर्श पी0 10 दस्तावेज प्रदर्शित कराये गये। अभियुक्त को अंतर्गत धारा 313 द0प्र0सं0 परीक्षित किया गया तो अभियुक्त ने अभियोजन साक्ष्य को गलत होना बताया और साक्ष्य प्रतिरक्षा प्रस्तुत नहीं कर स्वयं को झूठा फंसाये जाने के कथन किये। प्रकरण में दोनों पक्षों की बहस सुनकर दिनांक 05.07.2024 को विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को अपराध अंतर्गत धारा 406 भारतीय दंड संहिता से दोषमुक्त किया और अपराध अंतर्गत धारा 420 भारतीय दंड संहिता में दोषसिद्ध कर प्रश्नगत दण्डादेश पारित किया, जिसके विरुद्ध यह अपील प्रस्तुत की गई है।

9. अपील के अंतर्गत अपीलार्थी की ओर से दर्शित सर्वप्रथम आपत्ति छल सम्बन्धी अपराध का गठन किये जाने के संबंध में है जिसके लिए सुसंगत विधिक प्रावधान का सूक्ष्मता से अध्ययन आवश्यक है। भारतीय दंड संहिता की धारा 420 यह प्रावधान करती है कि–

Section 420–

Whoever cheats and thereby dishonestly induces the person deceived to deliver any property to any person, or to make, alter or destroy the whole or any part of a valuable security, or anything which is signed or sealed, and which is capable of being converted into a valuable security, shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to seven years, and shall also be liable to fine.

अर्थात् छल के लिए बेईमानीपूर्ण आशय से किसी व्यक्ति को प्रवंचित कर उसे उत्प्रेरित करना आवश्यक है कि ऐसा व्यक्ति कोई सम्पत्ति उत्प्रेरक को परिदत्त कर दे या किसी मूल्यवान प्रतिभूति या चीज को मूल्यवान प्रतिभूति में सम्परिवर्तित कर दे। सरल शब्दों में किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को प्रलोभन या प्रवंचनापूर्ण तरीके से ऐसे कार्य के लिए उत्प्रेरित करना छल है जो वह ऐसी उत्प्रेरणा व प्रवंचना के अभाव में न करता हो और परिणामस्वरूप कोई सम्पत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति ऐसे उत्प्रेरित व्यक्ति को परिदत्त कर दिया जावे। **धारा 420 भा0दं0सं0 की पृष्ठभूमि में धारा 415 भा0दं0सं0 "छल" है** जिसमें भी यही अभिव्यक्त किया गया है कि जब कोई व्यक्ति कपटपूर्ण प्रवंचना के उपरान्त बेईमानी से उत्प्रेरित होकर कोई सम्पत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त कर देता है या ऐसा कोई कार्य या लोप करने के लिए तैयार हो जाता है जिसे वह अन्यथा न करता और उस कार्य से उस व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, ख्याति या सम्पत्ति की अपहानि होती हो तो ऐसा कार्य छल कहा जाता है। **उक्त धारा 415 के स्पष्टीकरण में यह स्पष्ट अभिव्यक्त किया गया है कि तथ्यों का बेईमानीपूर्ण आशय से छिपाया जाना भी छल के अर्थ के अंतर्गत प्रवंचना है।**

10. उपरोक्त उपबन्धों को दृष्टिगत रखते हुए धारा 420 एवं 415 भा0दं0सं0 के अधीन किसी अपराध का गठन करने के लिए जो आवश्यक तत्व है वे इस रूप में परिगणित किये जा सकते हैः—

(1)—तथ्यों का छिपाव

(2)—कपटपूर्ण व बेईमानीपूर्ण आशय

(3)—प्रवंचना तत्पश्चात उत्प्रेरणा

(4)—प्रवंचना/उत्प्रेरणा के फलस्वरूप किया गया कार्य या सम्पत्ति का परिदान

(5)—पीडित पक्ष को शारीरिक, मानसिक, ख्याति या सम्पत्ति की अपहानि

उपरोक्त तत्वों के आधार पर हस्तगत प्रकरण की परिस्थितियों का यदि मूल्यांकन किया जावे तो सर्वप्रथम तथ्यों के छिपाव के अधीन परिवादी पक्ष से यह अपेक्षित था कि अपीलार्थी/अभियुक्त द्वारा किसी प्रकार के तथ्यों के छिपाव को न्यायालय के समक्ष प्रमाणित किया जाता परन्तु सम्पूर्ण प्रकरण में विचारण के दौरान परिवादी पी0ड0 2 हनुमान सहाय ने स्वयं अपने सशपथ कथनों में यह स्वीकार किया है कि 16.08.2013 को 2 प्लॉटों के दस्तावेज देखकर ही उसने इकरारनामा किया था और

उसे कृपाल सिंह ने बता दिया था कि प्लॉट संख्या बी–36 बुद्धसिंहपुरा बैंक में गिरवी रखा है और प्रतिफल की अग्रिम राशि बैंक में जमा कराने के लिए ही ली गई है। यह भी स्वीकारोक्ति है कि एग्रीमेन्ट में बुद्धसिंहपुरा के प्लॉट के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी दे दी गई थी। दिनांक 16.08.2013 को उसे प्लॉट भी दिखाये गये थे। उक्त स्वीकृति के अधीन प्रदर्श पी0 4 का अवलोकन करने पर प्रकट होता है कि उक्त इकरारनामा बिचौती में यह स्पष्ट अंकित है कि प्लॉट नम्बर बी–36 सम्पूर्ण पर विक्रय के दिन से ही प्रवीण कुमार का हाउसिंग फाईनेन्स बकाया है और उसका बकाया ऋण विक्रेता के द्वारा जमा करवाया जाकर प्रमाणपत्र क्रेता के हक में सुपुर्द किया जायेगा। उक्त अभिव्यक्ति यह स्पष्ट दर्शित करती है कि अभियुक्त / अपीलार्थी कृपाल सिंह ने इकरारनामा निष्पादन के समय किसी भी प्रकार की तात्विक विशिष्टि को परिवादी से नहीं छिपाया था और यह स्थिति परिवादी की स्वीकृति से भी और अधिक सम्पुष्ट हो जाती है। स्वीकृति एवं दस्तावेजी प्रमाण से यह प्रमाणित होता है कि अपीलार्थी / अभियुक्त द्वारा किसी प्रकार का तथ्यों का छिपाव इस प्रकरण में नहीं किया गया है तो उपरोक्त तत्वों में से प्रथम तत्व प्रकरण में विद्यमान नहीं है।

11. अगले तात्विक विवेचन की श्रृंखला के क्रम में अपीलार्थी / अभियुक्त का बेईमानीपूर्ण आशय से या कपटपूर्ण तरीके से परिवादी को प्रवंचित किया जाना प्रमाणित होना आवश्यक था परन्तु अभियोजन पक्ष की ओर से पत्रावली पर उपलब्ध करवायी गयी सम्पूर्ण साक्ष्य कहीं भी अभियुक्त / अपीलार्थी की उक्त तथाकथित प्रवंचना को प्रमाणित नहीं कर पा रही है। पी0ड0 2 हनुमान तथा इकरारनामे के गवाह पी0ड0 13 रामजीलाल ने भी अपने सशपथ कथनों में प्लॉट एवं दस्तावेज देखकर पूर्ण सन्तुष्ट होने के बाद ही इकरारनामा करने के कथन किये है और कहीं भी किसी भी प्रकार की प्रवंचना का उल्लेख नहीं किया है। परिवाद एवं मौखिक कथनों में परिवादी पक्ष ने इस तथ्य को प्रवंचनात्मक तथ्य होना दर्शित किया है कि इकरारनामा निष्पादित करते समय विवादित प्लॉट संख्या 36 का स्वामित्व अभियुक्त के पास नहीं था तथापि उक्त विक्रय इकरारनामा प्रदर्श पी0 4 निष्पादित किया गया और इस प्रकार प्रवंचना कारित की गई। इस परिप्रेक्ष्य में न्यायालय का अभिमत है कि निःसंदेह दिनांक 21.08.2013 को अपीलार्थी / अभियुक्त के पास किसी पंजीकृत दस्तावेज के माध्यम से प्लॉट नम्बर बी–36 का स्वामित्व नहीं था परन्तु प्रदर्श पी0 4 की सम्पूर्ण अन्तर्वस्तु यह अभिव्यक्त करती है कि यदि प्लॉट संख्या बी–36 के सम्बन्ध में इकरारनामा की शर्तों की पूर्ण पालना नहीं की जा सकी तो

अभियुक्त/अपीलार्थी स्वयं के स्वामित्व का वसीयत से प्राप्त प्लॉट संख्या 44 परिवादी को विक्रय करेगा। उक्त स्थिति को किसी भी रूप में प्रवंचना नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अपीलार्थी ने सम्पूर्ण वस्तुस्थिति शब्दशः इकरारनामे में वर्णित की है और पुनः विवेचन की पुनरावृति को निवारित करते हुए यह कहना न्यायोचित है कि परिवादी ने इकरारनामा निष्पादन स्वीकार किया है एवं सभी दस्तावेजी प्रमाण देखकर, स्थिति का अनुमान लगाकर ही संव्यवहार को आगे बढ़ाया था तो ऐसी स्थिति में अपीलार्थी/अभियुक्त का प्रवंचनात्मक या कपटपूर्ण आशय प्रकरण में सिद्ध नहीं हो पा रहा है।

12. अगले तत्व के अधीन प्रवंचना के परिणामस्वरूप किये गये सम्पत्ति के परिदान को प्रमाणित किया जाना था जिसके लिए परिवादी/प्रत्यर्थी पक्ष ने अग्रिम प्रतिफल स्वरूप दिये गये 40 लाख रूपये की धनराशि को उल्लिखित किया है और इसके लिए यह दर्शित किया गया है कि रजिस्ट्री करवाने के लिए अपीलार्थी/अभियुक्त ने जो अग्रिम प्रतिफल प्राप्त किया था उसके एवज में न तो विक्रयपत्र पंजीबद्ध करवाया गया और ना ही उक्त परिदान पुनः परिवादी को लौटाया गया। माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने सम्माननीय न्यायिक निर्णय **सुनीषा आनन्द बनाम हरियाणा राज्य कि0 अपील नम्बर 2457/2026 निर्णय दिनांक 11.05.2026, 2026 सुप्रीम (एस0सी0) 541, 2026 आईएनएससी 494** में यह प्रतिपादित किया है कि किसी भी आपराधिक विधि को किसी विशुद्ध रूप से सिविल विवाद के अधीन प्रयुक्त नहीं किया जा सकता और सिविल विवादों को आपराधिक प्रकरण का रूप देकर विचारित किया जाना न्यायिक प्रक्रिया का दुरूपयोग है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक अन्य सम्माननीय निर्णय **अनुकूल सिंह बनाम उत्तरप्रदेश राज्य कि0 अपील नम्बर 4250/2025 एसएलपी (कि) नं0 2682/2020, 2025 आईएनएससी 1153** में प्रतिपादित किया है किः–

17. This Court has, in a long line of decisions, deprecated the tendency to convert civil disputes into criminal proceedings. In Indian Oil Corporation v. M/s. NEPC India Ltd. 17 , it was held that criminal law cannot be used as a tool to settle scores in commercial or contractual matters, and that such misuse amounts to abuse of process. The following paragraphs from the decision are apposite:

> **"9. The principles, relevant to our purpose are:**
>
> **(i) A complaint can be quashed where the allegations made in the complaint, even if they are taken at their face value and accepted in their entirety, do not prima facie constitute any offence or make out**

> **the case alleged against the accused. For this purpose, the complaint has to be examined as a whole, but without examining the merits of the allegations. Neither a detailed inquiry nor a meticulous analysis of the material nor an assessment of the reliability or genuineness of the allegations in the complaint, is warranted while examining prayer for quashing of a complaint.**
>
> **(v) A given set of facts may make out: (a) purely a civil wrong; or (b) purely a criminal offence; or (c) a civil wrong as also a criminal offence. A commercial transaction or a contractual dispute, apart from furnishing a cause of action for seeking remedy in civil law, may also involve a criminal offence. As the nature and scope of a civil proceedings are different from a criminal proceeding, the mere fact that the complaint relates to a commercial transaction or breach of contract, for which a civil remedy is available or has been availed, is not by itself a ground to quash the criminal proceedings. The test is whether the allegations in the complaint disclose a criminal offence or not.**
>
> **10. While on this issue, it is necessary to take notice of a growing tendency in business circles to convert purely civil disputes into criminal cases. This is obviously on account of a prevalent impression that civil law remedies are time consuming and do not adequately protect the interests of lenders/creditors. Such a tendency is seen in several family disputes also, leading to irretrievable break down of marriages/families. There is also an impression that if a person could somehow be entangled in a criminal prosecution, there is a likelihood of imminent settlement. Any effort to settle civil disputes and claims, which do not involve any criminal offence, by applying pressure though criminal prosecution should be deprecated and discouraged.”**

18. Similarly, in Inder Mohan Goswami and another v. State of Uttaranchal and others18 , it was emphasized that criminal prosecution must not be permitted as an instrument of harassment or private vendetta. In Ganga Dhar Kalita v. State of Assam19 , this Court again reiterated that criminal complaints in respect of property disputes of civil nature, filed solely to harass the accused or to exert pressure in civil litigation, constitute an abuse of process.

19. Most recently, in Shailesh Kumar Singh @ Shailesh R. Singh v. State of Uttar Pradesh and others 20 , this Court disapproved the practice of using criminal proceedings as a substitute for civil remedies, observing that money recovery cannot be enforced through criminal prosecution where the dispute is essentially civil. The Court cautioned High Courts not to direct settlements in such matters but to apply the settled principles in Bhajan Lal. The following paragraphs are relevant in this context:

> **“9. What we have been able to understand is that there is an oral agreement between the parties. The Respondent No.4 might have parted with some money in accordance with the oral agreement and it may be that the appellant – herein owes a particular amount to be paid to the Respondent No.4. However, the question is whether prima facie any offence of cheating could be said to have been committed by the appellant.**

> **10. How many times the High Courts are to be reminded that to constitute an offence of cheating, there has to be something more than prima facie on record to indicate that the intention of the accused was to cheat the complainant right from the inception. The plain reading of the FIR does not disclose any element of criminality.**
>
> **11. The entire case is squarely covered by a recent pronouncement of this Court in the case of "Delhi Race Club (1940) Limited vs. State of Uttar Pradesh" reported in (2024) 10 SCC 690. In the said decision, the entire law as to what constitutes cheating and criminal breach of trust respectively has been exhaustively explained. It appears that this very decision was relied upon by the learned counsel appearing for the petitioner before the High Court. However, instead of looking into the matter on its own merits, the High Court thought fit to direct the petitioner to go for mediation and that too by making payment of Rs. 25,00,000/- to the 4th respondent as a condition precedent. We fail to understand why the High Court should undertake such exercise. The High Court may either allow the petition saying that no offence is disclosed or may reject the petition saying that no case for quashing is made out. Why should the High Court make an attempt to help the complainant to recover the amount due and payable by the accused. It is for the Civil Court or Commercial Court as the case may be to look into in a suit that may be filed for recovery of money or in any other proceedings, be it under the Arbitration Act, 1996 or under the provisions of the IB Code, 2016.**
>
> **12. Why the High Court was not able to understand that the entire dispute between the parties is of a civil nature.**
>
> **13. We also enquired with the learned counsel appearing for the Respondent No.4 whether his client has filed any civil suit or has initiated any other proceedings for recovery of the money. It appears that no civil suit has been filed for recovery of money till this date. Money cannot be recovered, more particularly, in a civil dispute between the parties by filing a First Information Report and seeking the help of the Police. This amounts to abuse of the process of law.**
>
> **14. We could have said many things but we refrain from observing anything further. If the Respondent No.4 has to recover a particular amount, he may file a civil suit or seek any other appropriate remedy available to him in law. He cannot be permitted to take recourse of criminal proceedings.**

20. Applying the above principles to the facts of the present case, it is manifest that the dispute – concerning repayment of loan money and the alleged coercion in execution of documents – is purely civil in character. The essential ingredients of cheating or forgery are not prima facie made out. The institution of multiple FIRs in quick succession, particularly after the appellant had already initiated lawful proceedings, reinforces the inference of mala fides.

13. अपीलार्थी / अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत सम्माननीय न्यायिक दृष्टान्तों में भी निम्न सिद्धान्त ही प्रतिपादित किये गये है कि:—

On a reading of the section it is manifest that in the definition there are set forth two separate classes of acts which the person deceived may be induced to do. in the first place he may be induced fraudulently or dishonestly to deliver any property to any person. The second class of acts set forth in the section is the doing or omitting to do anything which the person deceived would not do or omit to do if he were not so deceived. In the first class of cases the inducing must be fraudulent or dishonest. In the second class of acts, the inducing must be intentional but not fraudulent or dishonest.

47. Moreover, this Court has at innumerable instances expressed its disapproval for imparting criminal color to a civil dispute, made merely to take advantage of a relatively quick relief granted in a criminal case in contrast to a civil dispute. Such an exercise is nothing but an abuse of the process of law which must be discouraged in its entirety.

14. हस्तगत प्रकरण में भी इकरारनामा निष्पादन दोनों पक्षों द्वारा एक स्वीकृत स्थिति है और मात्र प्रतिफल का पुनर्भुगतान नहीं कर पाना या इकरारनामे के अनुपालन में विक्रयपत्र का निष्पादन न कर पाना छल के अपराध का गठन नहीं करता है क्योंकि छल का अपराध एक ऐसा आपराधिक कृत्य है जिसमें अभियुक्त का प्रारम्भ से ही आशय परिवादी को प्रवंचित कर सदोष लाभ प्राप्त करने का रहा होना चाहिए, जिसका कि पूर्ववर्ती विवेचन के अनुरूप हस्तगत प्रकरण में लेशमात्र भी अंश नहीं है और जब अपीलार्थी का प्रारम्भ से ही बेईमानीपूर्ण आपराधिक आशय प्रमाणित नहीं हो सका है तो छल के अपराध का गठन भी नहीं माना जा सकता है। दोनों पक्षों के बीच विद्यमान विवाद संविदा की विशिष्ट अनुपालना एवं प्रतिफल की वसूली से सम्बन्धित एक विशुद्ध सिविल विवाद है जिसे परिवादी ने आपराधिक स्वरूप देकर प्रथम सूचना रिपोर्ट के माध्यम से आपराधिक न्यायालय के समक्ष विचारण हेतु सृजित किया है।

15. इस अपराध के सन्दर्भ में अन्तिम आवश्यक तत्व परिवादी को कारित होने वाली शारीरिक, मानसिक ख्याति या सम्पत्ति के नुकसान पर आधारित है जिसके लिए परिवादी ने साम्पत्तिक हानि के रूप में प्रतिफल का भुगतान अभिव्यक्त किया है परन्तु उक्त अपहानि भी ऐसी अपहानि नहीं है जिसकी प्राप्ति सिविल अनुतोष के माध्यम से नहीं की जा सकती हो और इसीलिए मात्र इस आधार पर छल का अपराध समेकित रूप से गठित होने का तथ्य विद्यमान होना प्रतीत नहीं होता है। विचारण न्यायालय ने भी उक्त समग्र स्थिति का सूक्ष्मता से विवेचन किये बिना ही अविधिपूर्ण एवं अनौचित्यपूर्ण आदेश पारित किया है, जिसका मूल आधार रजिस्ट्री ना करवाना व प्रतिफल ना लौटाना मात्र है। विचारण न्यायालय ने छल के अपराध

के घटकों का इस प्रकरण पर मूल्यांकन किये बिना आदेश पारित किया है।

16. अतः समग्र परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय का निर्णय सम्पुष्ट किये जाने योग्य नहीं है और एतद्द्वारा प्रस्तुत अपील स्वीकार कर अपीलार्थी को आरोपित अपराध अंतर्गत धारा 420 आईपीसी से दोषमुक्त किये जाने योग्य पाया जाता है।

:: आदेश ::

17. परिणामतः अपीलार्थी/अभियुक्त कृपाल सिंह शेखावत पुत्र श्री जयसिंह राजपूत, निवासी 44, जयनिवास इन्द्रा कॉलोनी पानीपेच बनीपार्क, जयपुर द्वारा प्रस्तुत अपील विरूद्ध अधीनस्थ न्यायालय के निर्णय व दण्डादेश दिनांक 05.07.2024 स्वीकार की जाती है एवं अधीनस्थ न्यायालय का निर्णय व दण्डादेश दिनांक 05.07. 2024 अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी/अभियुक्त को आरोपित अपराध अंतर्गत धारा 420 भा0दं0सं0 के आरोप से दोषमुक्त घोषित किया जाता है। अपीलार्थी/ अभियुक्त के न्यायालय में नियमित तारीख पेशी पर उपस्थिति बाबत जमानत मुचलके निरस्त किये जाते है। अपीलार्थी/अभियुक्त धारा 437 ए दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत न्यायालय हाजा के इस निर्णय के विरूद्ध की जाने वाली अपील की स्थिति में माननीय उच्च न्यायालय में उपस्थित रहने बाबत 20,000/—रूपये की जमानत एवं इसी कदर राशि का मुचलका प्रस्तुत कर तस्दीक करावे। निर्णय की प्रति के साथ विद्वान अधीनस्थ न्यायालय की पत्रावली अविलम्ब प्रेषित की जावे।

(पुरवा चतुर्वेदी)
अपर सेशन न्यायाधीश, क्रम—11,
जयपुर महानगर प्रथम
मुख्यालय सांगानेर

18. निर्णय अपील आज दिनांक 29.06.2026 को खुले न्यायालय में लिखाया जाकर सुनाया गया एवं हस्ताक्षरित किया गया।

(पुरवा चतुर्वेदी)
अपर सेशन न्यायाधीश, क्रम—11,
जयपुर महानगर प्रथम
मुख्यालय सांगानेर